इकाई 27 गाँधीवाद (धर्म, स्वराज, सर्वोदय और सत्याग्रह)

इकाई की रूपरेखा

27.0 उद्देष्य

27.1 परिचय : गाँधी के लेख

27.2 कुछ प्रभाव जिन्होंने गाँधी के राजनीतिक चिंतन को मूर्त्त रूप दिया

27.3 स्वराज : आन्तरिक स्वतंत्रता और बाह्य स्वतंत्रता

27.4 स्वतंत्रता और संसदीय स्वराज

27.4.1 संसदीय स्वराज के कुछ लक्षण

27.5 सर्वोदय : सामाजिक सेवा के द्वारा आत्मानुभूति (Self-Realisation) के रूप में स्वराज

27.6 सत्याग्रह बनाम शान्तिपूर्ण विरोध

27.6.1 सत्याग्रह के सिद्धांत और पद्धतियाँ

27.6.2 सत्याग्रह पर कुछ मूल्यात्मक टिप्पणियाँ

27.7 सारांष

27.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

27.9 बोध प्रष्नों के उत्तर

27.0 उद्देष्य

इस इकाई में, हमारा उद्देष्य मोहनदास करमचंद गाँधी (1869-1948) जो सही अर्थों में महात्मा के रूप में श्रद्धेय हैं, के नैतिक-राजनीतिक सिद्धांत के अर्थ और महत्त्व की प्रसंगाश्रित बोधगम्यता (contextual understanding) प्राप्त करना है। उनके मुख्य राजनीतिक विचारों में स्वराज, सर्वोदय और सत्याग्रह शामिल हैं। इन राजनीतिक विचारों के सम्बन्ध में हम निम्न प्रष्न उठाते हैं, जिनके उत्तर इस इकाई में तलाष करेंगे :

> गाँधीवादी *स्वराज* का क्या अर्थ है? मात्र राजनीतिक स्वतंत्रता अथवा राजनीतिक आज़ादी की तुलना में यह किस प्रकार बेहतर है। संसदीय प्रजातंत्र, आत्म-नियंत्रण, आत्म-अनुभूति आदि से यह किस प्रकार जुड़ा हुआ है।

गाँधी के अनुसार, सर्वोदय का क्या अर्थ है? उनके अनुसार, *सर्वोदय* और आत्म-अनुभूति के बीच क्या सम्बन्ध है? सर्वोदय उपयोगितावाद और साम्यवाद के राजनीतिक सिद्धांत से किस प्रकार भिन्न है?

राजनीतिक विरोध और सामाजिक परिवर्तन के *सत्याग्रह* मार्ग के विषिष्ट सिद्धांत और तरीके क्या हैं? *सत्याग्रह* किस प्रकार शांतिपूर्ण विरोध से भिन्न है?

27.1 परिचय : गाँधी के लेख

गाँधी के नैतिक-राजनीतिक विचार उनकी उन किताबों और चार साप्ताहिक पत्र/पत्रिकाओं में उनके उन लेखों, पत्रों और सम्पादकीय से प्राप्त हो सकते हैं, जो उन्होंने दक्षिण अफ्रीका और भारत में अपने सार्वजनिक जीवन के दौरान भिन्न-भिन्न समय पर

सम्पादित किए अथवा प्रकाषित किए। ये साप्ताहिक पत्र/पत्रिकाएँ हैं: *इंडियन ओपीनियन, यंग इंडिया, हरिजन* और *नवजीवन*। गाँधी की कुछ पुस्तकें जिन्हें उनकी पत्रिकाओं में पहली बार सीरियल के रूप में दिया गया, थीं : *हिन्द स्वराज, सत्याग्रह इन साउथ अफ्रीका, द स्टोरी ऑफ माई एक्सपैरीमेंट्स विद ट्रुथ, आश्रम आब्ज़र्वेन्स इन एक्षन, ए गाइड टू हैल्थ, डिसकोर्सेज़ ऑन गीता एंड कन्सट्रक्टिव प्रोग्राम।* गाँधी ने प्लैटो की *ऐपौलोजी*, डब्ल्यू. साल्टर की *एथीकल रिलीजन*, जॉन रस्किन की *अनटू दिस लास्ट*, हैनरी डैविड थोररू की *प्रिंसीपल्स ऑफ सिविल डिसओबीडिएन्स* तथा लियो टॉलस्टाय की *लैटर टू ए हिन्दू* पुस्तकों के भावानुवाद और/ अथवा अनुवाद (गुजराती में) भी लिखे तथा प्रकाषित किए। गाँधी के लगभग सभी लेख *कलेक्टेड वर्क्स ऑफ महात्मा गाँधी* (प्रकाषन प्रखण्ड, भारत सरकार) के 100 खण्डों में पाए जा सकते हैं। इनमें उनके अनेक भाषण, साक्षात्कार और पत्र व्यवहार शामिल हैं।

गाँधी के लेख किसी अकादमिक तरीके से प्रस्तुत नहीं किए गए थे, अपितु वे जाति भेद, उपनिवेषवाद, आर्थिक शोषण, अस्पृष्यता और साम्यवाद के विरुद्ध विषाल जनसमुदाय द्वारा वास्तविक राजनीतिक संघर्ष के मध्य प्रकट हुए थे। गाँधी ने दक्षिण अफ्रीका (1893-1914) और भारत (1915-1948) में इन संघर्षों का नेतृत्व किया था। उन्होंने इंग्लैण्ड की अनेक यात्राओं के दौरान उनके लिए मुहिम भी चलाई थी। संयोगवष उन्होंने इंग्लैण्ड में अध्ययन किया और वकालत की परीक्षा उत्तीर्ण की। अपने कुछ लेख उन्होंने अपने मौनव्रत और उपवास के दिनों में तथा दक्षिण अफ्रीका और भारत में कई बार कारावास के दौरान लिखे। उसकी प्रसिद्ध पुस्तक, *हिन्द स्वराज,* नवम्बर 1909 में इंग्लैण्ड से दक्षिण अफ्रीका को वापसी यात्रा के दौरान *किल्डोनन कैसिल* जहाज पर लिखी गई थी।

27.2 कुछ प्रभाव जिन्होंने गाँधी के राजनीतिक चिंतन को मूर्त्त रूप दिया

गाँधी के नैतिक-राजनीतिक सिद्धांत की ऐतिहासिक-प्रसंगाश्रित जानकारी के लिए यह ध्यान में रखना आवष्यक है कि वर्ष 1905 से 1918 के दौरान ब्रिटिष साम्राज्य पद्धति के प्रति उनका दृष्टिकोण परिवर्तन की धीमी प्रक्रिया से गुजरा। पहले उनका शाही समर्थन से मोहभंग हुआ जो बाद में पूर्ण विरोध में बदल गया। कुछ ऐसी घटनाएँ जिन्होंने गाँधी की राजनीतिक सोच में यह परिवर्तन किया, थीं : बंगाल का विभाजन, दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों के प्रति जाति भेद, रॉलट कानून, जलियाँवाला बाग का विषाल हत्याकांड और खिलाफत मुद्दा।

उस अवधि के दौरान गाँधी के राजनीतिक विचारों में यह परिवर्तन नीचे दी नई पुस्तकों के द्वारा भी हुआ, जिनका उन्होंने अध्ययन किया था।

i) **आधुनिक सभ्यता पर आलोचनात्मक लेख** (जिनमें कुछ पुस्तकें ग़ैर-नैष्ठिक ईसाइयत पर शामिल हैं)

इस अवधि के दौरान गाँधी ने टॉलस्टाय, रस्किन, कारपेण्टर, मैटलैंड, साल्टर, आर. पी. दत्त, दादाभाई नारोजी आदि की रचनाओं का अध्ययन किया। इनमें से लियो टॉलस्टाय की पुस्तक *किंगडम ऑफ गॉड विदिन यू'* एवम् *गौस्पेल इन ब्रीफ* और जॉन रस्किन की *अनटू दिस लास्ट* ने गाँधी पर गहरा प्रभाव छोड़ा। थे और कुछ सीमा तक अन्य लेखकों के लेखन ने आधुनिक पाष्चात्य सभ्यता से उनके मोहभंग में योगदान किया। इन लेखनों से, गाँधी ने व्यष्टिवादी, उपयोगितावादी और सत्तावादी सिद्धांतों जिन पर साम्राज्यवादी/उपनिवेषी सरकार कायम थी, के विकल्प के कुछ

नियामक विचार भी प्राप्त किए। स्वराज और सर्वोदय के गाँधी के विचार (नीचे देखें) जिनका अर्थ था, दूसरों की सेवा से आत्म-अनुभूति, टॉलस्टाय और रस्किन द्वारा भारी प्रभावित हुए थे।

ii) **हिन्दू धार्मिक दर्षनः** गाँधी ने भागवत् गीता और हिन्दू धर्म की अनेक पवित्र पुस्तकों का भी अध्ययन किया, जिनमें से कुछ उनके जैनी परामर्षदाता, राजचन्द मेहता, जिन्हें रायचन्दभाई के नाम से भी पुकारा जाता था, ने पढ़ने के लिए सिफारिष की थी। ये किताबें योग, *आदिवेता वेदान्त,* जैन धर्म, बौद्ध धर्म, सांख्य आदि पर थीं। इन पुस्तकों ने गाँधी को धार्मिक प्रेरणा देने वाले नियमों अथवा व्यक्तिगत और सामूहिक आचरण के सिद्धांतों जैसे, *सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह और समभाव* के मूल्यों को ग्रहण करने के लिए प्रेरित किया। गाँधी ने उनमें व्यष्टिवाद, उपयोगितावाद और हिंसा के प्रबल, आधुनिक/ पाष्चात्य मूल्यों अथवा सिद्धांतों का वैकल्पिक अथवा संषोधनात्मक रूप देखा। उदाहरणार्थ, उन्होंने *भागवत गीता* में एक ''अवैध आचरण पथ प्रदर्षक'' पाया। पन्द्रहवीं शताब्दी के एक संत कवि नरसिंह मेहता के भजनों ने भी इसमें दूसरों, विषेष रूप से गरीब और जरूरतमंद, की सेवा के मूल्य को पूरी तरह भर दिया था।

इन अध्ययनों और उपरोक्त घटनाओं ने गाँधी को 1919-20 में साम्राज्यवादी/ उपनिवेषी सरकार का पूर्ण विरोधी बना दिया। 1920 में कलकत्ता में आयोजित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक विषेष सत्र में गाँधी ने कहा कि भारत का लक्ष्य स्वराज से कम कुछ नहीं है।

उनके जीवन में इस निर्णयात्मक चरण के दौरान उनके विचारों और कार्यों में बदलाव की इस प्रक्रिया के माध्यम से उन्होंने अपने नैतिक-राजनीतिक सिद्धांत और *सत्याग्रह, स्वराज* और *सर्वोदय* के अभ्यास का विकास किया। इसी के साथ, इनसे उन्हें ऐसा प्रतीत होता था मानो उन्हें उपनिवेषी/साम्राज्यवादी आधुनिकता के राजनीतिक सिद्धांत का एक मुक्तिदाता विकल्प उपलब्ध हो रहा है। उनका यह भी विष्वास था कि स्वराज और सर्वोदय का उनका संदर्ष (conception) अनुदारक परम्परागत मान्यताओं का एक मुक्तिकारी विकल्प है।

बोध प्रष्न 1

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों के सुझावों के लिये इकाई का अन्त देखें।

1) कुछ महत्त्वपूर्ण लेखनो/ लेखकों को बताएँ जिन्होंने मोहनदास कर्मचन्द गाँधी को प्रभावित किया।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) संक्षिप्त में उन प्रभावों का उल्लेख करें जिन्होंने गाँधी की सामाजिक आर्थिक सोच को मूर्त्त रूप दिया।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

27.3 स्वराज : आन्तरिक स्वतंत्रता और बाह्य स्वतंत्रता

स्वराज से गाँधी का तात्पर्य बाह्य अथवा राजनीतिक स्वतंत्रता तथा आन्तरिक अथवा आध्यात्मिक स्वतंत्रता, दोनों से था। ''बाह्य स्वतंत्रता'' में उन्होंने राष्ट्रीय राजनीतिक स्वतंत्रता और संसदीय स्वराज को शामिल किया था। बाह्य स्वतंत्रता के रूप वे हैं, जिनमें वे लोगों को बाहरी नियंत्रण अथवा दूसरों के शासन से मुक्त कराना चाहते हैं, भले ही वे विदेषी हों अथवा अपने निजी देष के वासी हों।

''आन्तरिक स्वतंत्रता'' से उनका तात्पर्य उन अन्तस्थ (inner) बाधाओं से स्वतंत्रता थी जैसे अज्ञान, भ्रांतियाँ, स्वार्थ, लालच, असहिष्णुता और घृणा। गाँधी के अनुसार, ये व्यष्टि की स्व-अनुभूति और *मोक्ष* प्राप्ति अर्थात् *ब्रह्म* अथवा *परमात्मा* के साथ आत्मा की अपनी पहचान की अनुभूति में बाधा डालती हैं। इस प्रकार, उन्होंने लिखा है, ''स्वयं पर शासन सच्चा स्वराज है, यह *मोक्ष* अथवा मुक्ति के समतुल्य है।'' गाँधी ने इन दोनों प्रकार के स्वराज के संदर्भ में, सैद्धांतिक और व्यावहारिक, इन दोनों तरह से मौलिक योगदान किया। उनके *स्वराज* का आदर्ष एक वर्ग के रूप में था, जिसकी चार अवियोज्य (inseparable) भुजाएँ होती हैंः i) राजनीतिक स्वतंत्रता; ii) आर्थिक स्वतंत्रता; iii) दूसरों के प्रति सामाजिक सम्बन्धों और नैतिक अनिवार्यताओं में अहिंसा, और iv) धर्म के रूप में सत्य। गाँधी का वर्णन निम्न उद्धरण से प्रमाणित होता है :

> *स्वराज* की मेरी धारणा के बारे में कोई ग़लती नहीं होनी चाहिए। यह विदेषी नियंत्रण से पूर्ण स्वतंत्रता तथा पूर्ण आर्थिक स्वतंत्रता है। इस प्रकार एक तरफ आप राजनीतिक रूप से स्वतंत्र हों तथा दूसरी ओर आर्थिक रूप से। इसके दो अन्य पक्ष भी हैं। उनमें से एक नैतिक और सामाजिक है, तदनुरूप पक्ष *धर्म* है अर्थात् उत्कृष्ट स्थिति का धर्म। इसमें हिन्दू धर्म, इस्लाम, ईसाइयत आदि शामिल हैं, परन्तु यह उन सबसे श्रेष्ठ है। आप इसे सत्य के नाम से जान सकते हैं, जो सर्वव्याप्त है और यह सम्पूर्ण विनाष और सम्पूर्ण परिवर्तन के बाद भी बना रहेगा। नैतिक और सामाजिक उत्थान की उस शब्द से मान्यता दी जानी चाहिए, जिसे हम प्रयोग करते रहे हैं, अर्थात् अहिंसा। हम इसे *स्वराज* का वर्ग कह सकते हैं। इस वर्ग की बनावट विकृत हो जाएगी, यदि इसका एक भी कोण असत्य हो। कांग्रेस की भाषा में, हम, सत्य और अहिंसा के बिना, सही अर्थों में परमात्मा पर विष्वास किए बिना राजनीतिक और आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त नहीं कर सकते हैं और इस प्रकार नैतिक और सामाजिक उत्थान होता है।

27.4 स्वतंत्रता और संसदीय स्वराज

गाँधी की बाह्य स्वतंत्रता के रूप में स्वराज की धारणा का प्रथम घटक राष्ट्रीय राजनीतिक स्वतंत्रता है। उन्होंने किसी अन्य एकमात्र व्यष्टि की तुलना में राजनीतिक सत्ता के साम्राज्यवादी सरकार से भारतीय राष्ट्रीय नेतृत्व को हस्तांतरण में महान योगदान दिया। उन्हें सही अर्थों में ''राष्ट्रपिता'' कहा जाता है।

इस बात पर कायम रहते हुए कि राष्ट्रीय राजनीतिक स्वतंत्रता स्वराज की उनकी धारणा का एक अनिवार्य अर्थ थी, गाँधी का तर्क था कि यह उसका मात्र एक आंषिक अथवा अपूर्ण अर्थ अथवा संघटक है। उनके दृष्टिकोण में, स्वराज का अधिक पूर्ण और गहरी ध ाारणा ''अनन्ततः अधिक महान है और उसमें स्वतंत्रता शामिल है।'' स्वराज की अधिक पूर्ण धारणा में राष्ट्रीय राजनीतिक स्वतंत्रता के अलावा, निम्नलिखित अतिरिक्त घटक शामिल हैं। एक ''संसदीय अथवा लोकतांत्रिक स्वराज'' तथा ''दूसरों की सेवा से आत्म-अनुभूति के रूप में स्वराज''। व्यापक स्वराज के इन दो अतिरिक्त घटकों में से इस खंड में पहले घटक की चर्चा की गई है तथा दूसरे घटक पर अगले खंड में चर्चा होगी।

1931 में, गाँधी ने घोषणा की कि वह ''प्रौढ़ मताधिकार से संयोजित थे।'' एक अन्य अवसर पर उन्होंने कहा, ''लोक स्वराज का अर्थ है व्यष्टियों का समग्र स्वराज (स्व-षासन)।'' उन्होंने निम्नलिखित शब्दों में इसका वर्णन किया :

> स्वराज से मेरा तात्पर्य है लोगों की सहमति से भारत की सरकार जैसा भी प्रौढ़ जनसंख्या, पुरुष अथवा महिला, मूल निवासी अथवा अधिवासी के अधिकांष द्वारा अभिनिष्चित की जाए.... (वा)स्तविक स्वराज कुछ लोगों द्वारा सत्ता प्राप्त करने से नहीं आएगा, अपितु यह सभी के द्वारा उस क्षमता के प्राप्त करने पर आएगा जिससे उस सत्ता का विरोध किया जा सके जब इसका दुरुपयोग हो रहा हो। दूसरे शब्दों में, स्वराज जनसमुदाय को इस प्रकार षिक्षित करके प्राप्त किया जाना चाहिए जिससे उसे सत्ता के विनियमन और नियंत्रण करने की अपनी क्षमता का बोध हो।

उपरोक्त परिच्छेद में उस आदर्ष को संप्रेषित किया गया है जिसे गाँधी ने ''संसदीय अथवा लोकतांत्रिक स्वराज'' कहकर पुकारा और जिसकी प्राप्ति के लिए उन्होंने अपने राजनीतिक जीवन का अधिकांष अर्पित कर दिया।

हिन्द स्वराज (1990) में, गाँधी ने आधुनिक सभ्यता नामतः संसद, कानून-अदालतें, पुलिस, सेना, मषीनरी, अस्पताल, रेलवे आदि, के प्रतिष्ठानों के मूल्य अथवा भूमिका का अत्यधिक नकारात्मक दृष्टिकोण लिया था। उन्होंने कहा कि आधुनिक सभ्यता के ये प्रतिष्ठान नैतिकता से दूर चले गए थे, जबकि इसके विपरीत, ''भारतीय सभ्यता की प्रवृत्ति नैतिकता के उत्थान की है।'' तदनुसार, आधुनिक पाष्चात्य सभ्यता के प्रतिष्ठानों के स्थान पर उन्होंने सत्य और अहिंसा के आध्यात्मिक मूल्यों के अनुसार व्यष्टियों द्वारा ''वास्तविक स्वषासन..... (नामतः) स्वयं पर शासन और स्वयं पर नियंत्रण'' का एक वैकल्पिक आदर्ष प्रस्तुत किया।

तथापि, भारतीय जनसमुदाय को स्वतंत्रता संघर्ष में गतिषील बनाने में अपने सक्रिय योगदान के एक वर्ष के अन्दर गाँधी ने आधुनिक सभ्यता के अपने आरंभिक विचारों में आंषिक संषोधन किया। यह संषोधन उनके स्वतंत्रता संघर्ष में मात्र सक्रिय भाग लेने के कारण ही नहीं था, अपितु इस समालोचना के कारण भी था जिसे अनेक राजनीतिक

विचारकों और राजनीतिक नेताओं ने गाँधी की पुस्तक में लिखा देखा। किसी भी तरह 1915 में दक्षिण अफ्रीका से भारत में अपनी अंतिम वापसी के लगभग एक वर्ष के अंदर, गाँधी ने आधुनिक जीवन के प्रतिष्ठानों के प्रति अपेक्षाकृत सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाया। इन प्रतिष्ठानों में संसद, कानून-अदालतें, मषीनरी, रेलवे और अस्पताल शामिल है। अपने *हिन्द स्वराज* में बताए अनुसार, उन्हें प्रत्यक्ष तौर पर खारिज करने की बजाए अब उन्होंने उन्हें अनिच्छापूर्वक उसमें शामिल कर लिया, जिसे उन्होंने ''संसदीय स्वराज की प्राप्ति के लिए क्षम्य कार्यक्रम'' कहा था।

उन्होंने कहा कि उनका *हिन्द स्वराज* अन्धकारमय अनजाने युगों की तरफ वापस जाने के प्रयास के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए, अपितु उसे ''सदाचार के पैमाने में'' ''आधुनिक सभ्यता की जाँच के लिए प्रयास के रूप में लिया जाना चाहिए। उन्होंने घोषणा की कि अपने आदर्ष स्वराज के नाम पर वह स्वप्न नहीं देखेंगे जैसा करने का उन पर आरोप था, ''कोई रेलवे नहीं, कोई मषीनरी नहीं, कोई सेना नहीं, कोई कानून नहीं और कोई अदालत नहीं''। अपितु वह उनका पुनर्गठन करेंगे, जिससे वे ''लोगों के कल्याण के लिए'' कार्य कर सकें, न कि आजकल की तरह वे जनसमुदाय को परेषान रखें। अब उन्होंने ''संसदीय'' अर्थात् ''लोकतांत्रिक स्वराज'' को एक व्यापक स्वराज की अपनी धारणा के एक बहुत आवष्यक और मूल्यवान घटक के रूप में देखा। उन्होंने 1920 में लिखा था, ''जहाँ तक मैं देखता हूँ, स्वराज लोगों द्वारा चुनी हुई एक ऐसी संसद होगी जिसका वित्त, पुलिस, थल सेना, जल सेना, अदालतों और षिक्षण संस्थानों पर पूर्ण अधिकार होगा।''

''संसदीय स्वराज'' के संगठनात्मक लक्षणों के बारे में गाँधी ने इसे ग्राम्य आधारित, विकेन्द्रीकृत ढाँचे के रूप में प्राथमिकता दी, जिसमें सभी अपितु सरकार को निम्नतम स्तर उसके तत्काल निम्नतर स्तर द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित हो। यह विकेन्द्रित, ग्राम्य आधारित संसदीय/ लोकतांत्रिक स्वराज का नमूना वह नमूना नहीं था, जिसका कांग्रेस द्वारा पक्ष लिया गया था और जिसे भारतीय संविधान द्वारा अपनाया गया। तथापि, संविधान में कुछ तथाकथित गाँधीवादी प्रतिष्ठान शामिल किए गए हैं, जैसे ग्राम-पंचायत। पुनष्च, व्यक्तिगत और नागरिक स्वतंत्रता तथा संविधान के उदारवादी-लोकतांत्रिक राजनीतिक दर्षन के लोकतांत्रिक आधिकारिक घटक गाँधी के निजी नैतिक-राजनीतिक दर्षन के मौलिक रूप में हैं।

27.4.1 संसदीय स्वराज के कुछ लक्षण

संसदीय स्वराज की स्थापना के लिए अपने व्यावहारिक और सैद्धान्तिक कार्यों में गाँधी ने इसे चार लक्षणों से सम्पन्न करने पर ध्यान केन्द्रित किया : सार्वभौमिक प्रौढ़ मताधिकार, नागरिक असैनिक स्वतंत्रता, अल्पसंख्यक अधिकार तथा गरीब और शोषित वर्ग के लिए न्याय के प्रति प्राथमिक वचनबद्धता। उनका विष्वास था कि ये संसदीय स्वराज के आवष्यक घटक हैं।

गाँधी ने व्यक्तिगत और नागरिक स्वतंत्रताओं को संसदीय स्वराज की 'बुनियाद' और 'साँस' की संज्ञा दी। सितम्बर 1940 में अखिल भारतीय कांग्रेस समिति के समक्ष एक भाषण में उन्होंने कहा, ''भाषण और कलम की स्वतंत्रता स्वराज की बुनियाद है।'' उन्होंने आगे बताया कि अहिंसात्मक तरीके से स्वराज प्राप्त करने का ''यही एकमात्र उपाय है।''

मौलिक अधिकारों पर कांग्रेस का प्रसिद्ध कराची संकल्प (1931) जिसका मसौदा जवाहरलाल नेहरू द्वारा गाँधी के परामर्ष से तैयार किया गया था, स्वयं गाँधी द्वारा अपनाए जाने के लिए पेष किया गया था। इसमें गाँधी द्वारा दिए गए कई सुझाव और संषोधन शामिल थे। वस्तुतः, गाँधी ही इस संकल्प के प्रवर्त्तक थे। संकल्प में व्यक्तिगत तथा नागरिक

स्वतंत्रताओं और लोकतांत्रिक, राजनीतिक अधिकारों की एक सर्वाधिक प्रभावषाली सूची शामिल थी।

> व्यक्तिगत और नागरिक स्वतंत्रताओं की प्रमुखता पर चिन्ता व्यक्त करते हुए, गाँधी ने लिखा था :
>
> अहिंसा के अनुपालन के अनुरूप नागरिक स्वतंत्रता स्वराज के प्रति पहला कदम है। यह स्वतंत्रता की बुनियाद है। इसमें षिथिलता अथवा समझौते की कोई गुंजाइष नहीं है। यह जीवन का जल है। मैंने कभी जल को पतला किए जाने के बारे में नहीं सुना है।

अब, हमें संसदीय स्वराज की गाँधीवादी धारणा के अल्पसंख्यक अधिकारों के घटक पर विचार करना चाहिए। गाँधी संसदीय लोकतंत्र के इस खतरे से पूरी तरह आगाह थे कि अल्पसंख्यक समूह अथवा समुदाय बहुमत की नृषंसता, अथवा असहिष्णुता का षिकार हो सकते हैं। जहाँ वह लोकतांत्रिक सरकार के क्रियाविधिक, बहुमत शासन के सिद्धांतों के प्रति दृढ़निष्चित थे, वहीं वह इसके दूसरे दुहरे और अविभाज्य सिद्धांत नामतः अल्पसंख्यक समुदायों के मौलिक, सांस्कृतिक अथवा धार्मिक अधिकारों की प्रतिभूति अथवा उनके संरक्षण के प्रति समान रूप से वचनबद्ध थे। 1931 में, उन्होंने कहा था :

> यह बताया गया है कि भारतीय स्वराज बहुमत वाले समुदाय अर्थात् हिन्दुओं का शासन होगा। इससे बड़ी कोई गलती नहीं हो सकती। यदि यह सत्य है, तो मैं किसी के लिए भी इसे स्वराज कहलाना पसंद नहीं करूँगा और अपनी सम्पूर्ण शक्ति के साथ इससे संघर्ष करूँगा, क्योंकि मेरे लिए *हिन्द स्वराज* सभी लोगों का शासन है, न्याय का शासन है। भले ही इस शासन में मंत्रिगण हिन्दू हों अथवा मुसलमान अथवा सिख और भले ही विधायिकाएँ व्यापक तौर पर हिन्दुओं अथवा मुसलमानों अथवा किसी अन्य समुदाय से भरी जाएँ, उन्हें सबको समान न्याय देना पड़ेगा। और भारत में... किसी भी समुदाय को स्वराज पर किसी अन्य द्वारा एकाधिकार किए जाने की किसी आषंका की आवष्यकता नहीं है।....

गाँधी इस बात पर कायम रहे कि अल्पसंख्यक समुदायों के धार्मिक और सांस्कृतिक जीवन के ''प्रथम कोटि के महत्त्व के मामलों'' को बहुमत शासन के लोकतांत्रिक, क्रियाविधिक सिद्धान्त के दायरे से बाहर रखा जाएगा। गहन अन्तरदृष्टि का परिचय देते हुए उन्होंने लिखा था :

> लोकतंत्र ऐसा राज्य नहीं है, जहाँ लोग भेड़ की तरह कार्य करें। लोकतंत्र में, विचार और कार्य की व्यष्टिगत स्वतंत्रता को विशेष संरक्षण दिया जाता है। अतः मेरा विष्वास है कि अल्पसंख्यक को बहुसंख्यक से भिन्न व्यवहार/ कार्य करने का पूरा अधिकार है।
>
> यह जानते हुए भी कि हम सब एक जैसा नहीं सोचेंगे, आचरण का सुनहरी नियम..... पारस्परिक सहिष्णुता है और हम सत्य को टुकड़ों में और दर्षन के विभिन्न नज़रिए से देखते हैं। चेतनता सभी के लिए समान नहीं होती। इसीलिए जब यह व्यष्टिगत आचरण के लिए एक अच्छी पथ प्रदर्षक है, उसे सभी पर लागू किया जाना प्रत्येक के विवेक की स्वतंत्रता में असह्य हस्तक्षेप करना होगा।

गाँधी के संसदीय/ लोकतांत्रिक स्वराज की संकल्पना का बहुत ही विषेष लक्षण इसकी मौलिक संस्थाओं के प्रति न्यायसंगत व्यवहार है, जो गरीब और ज़रूरतमंदों के हितों को

प्रमुखता देते हुए सभी के कल्याण को प्रोन्नत करने की मांग करता है। उन्होंने कहा था, ''षासन की अहिंसात्मक पद्धति स्पष्ट तौर पर उस समय तक एक असंभव स्थिति है, जब तक अमीर और करोड़ों गरीबों के बीच विषाल खाई को भरा नहीं जाता''। पुनः उनका उद्धरण है :

> आर्थिक स्वतंत्रता.... अहिंसात्मक स्वतंत्रता की सर्व-कुंजी है।.... इसका तात्पर्य है, एक तरफ उन अमीरों जिनके हाथों में राष्ट्र की अधिकांष सम्पदा केन्द्रित है, को नीचे स्तर पर लाना तथा दूसरी तरफ, करोड़ों अर्द्ध-भूखे नंगों का जीवनस्तर उठाया जाना। शासन की अहिंसात्मक पद्धति स्पष्ट तौर पर तब तक असंभव है, जब तक अमीर और करोड़ों भूखों के बीच व्यापक खाई बनी रहेगी।

गाँधी प्रायः अपने आदर्ष स्वराज को '''गरीब आदमी का स्वराज'' कहते थे। 1947 में, आज़ादी के अवसर पर, उन्होंने अपने देषवासियों को सलाह दी कि गरीबों के प्रति मात्र लोक नीति स्तर पर ही अधिमान्य अभिगमन (preferential approach) न प्रदान किया जाए, अपितु इसे व्यक्तिगत स्तर पर भी अपनाया जाए। उन्होंने कहा था :

> मैं आपको एक रक्षा कवच दूँगा। जब कभी आप संषय में हों, अथवा स्वाभिमान/ अहम् आप पर बुरी तरह हावी हो उस समय निम्न परीक्षण को अपनाए। ऐसे सबसे गरीब और सबसे कमजोर आदमी का चेहरा याद करें जिसे आपने देखा है, और स्वयं से प्रष्न करें कि आपके द्वारा उठाए गए कदम से उसका कोई उपयोग होगा। क्या उसे इससे कोई लाभ मिलेगा? क्या यह उसके निजी जीवन और भाग्य पर नियंत्रण कायम कर पाएगा? दूसरे शब्दों में, क्या यह भूखे और आध्यात्मिक रूप से भूखे मर रहे करोड़ों लोगों को स्वराज्य दिला पाएगा?

गाँधी के स्वाभाविक/ विभाज्य न्याय की संकल्पना उनके सम्पत्ति में न्यासिता के सिद्धांत में निहित है, जिसका वे अक्सर ''आर्थिक समानता'' के संदर्भ में हवाला दिया करते थे। उनका विष्वास था कि सांविधिक न्यासिता आर्थिक जीवन को संगठित करने का एक तरीका है, जो अधिक उत्पादकता के लिए व्यष्टियों को उनके विधिसम्मत प्रोत्साहनों से वंचित किए बिना तथा समाज को सम्पत्ति में वृद्धि से वंचित किए बिना सम्पत्ति का एक अहिंसक, न्यायोचित वितरण प्रदान करता है।

मार्च 1946 में, गाँधी ने लिखा था, ''मान लीजिए कल भारत एक स्वतंत्र देष बन जाता है, सभी पूँजीवादियों को सांविधिक न्यासी बनने का एक अवसर प्राप्त होगा।'' उन्होंने आगे कहा था :

> जहाँ तक सम्पत्ति के विद्यमान मालिकों का सम्बन्ध है, उन्हें वर्ग-संघर्ष के बीच अपनी प्राथमिकताएँ चुननी होंगी तथा स्वेच्छा से स्वयं को अपनी सम्पत्ति का न्यासी होना पड़ेगा। उन्हें अपनी धन दौलत का संरक्षक बने रहने तथा अपनी प्रतिभा को सम्पत्ति की वृद्धि के लिए उपयोग करने की अनुमति दी जायगी। वे अपनी प्रतिभा का उपयोग स्वयं के लिए करने की बजाए राष्ट्र के कल्याण के लिए तथा कोई शोषण किए बिना करेंगे। राज्य उनके कमीषन की दर विनियमित करेगा जिसे वे अपनी प्रदत्त सेवा और समाज के लिए उसके मूल्य के अनुरूप प्राप्त करेंगे। उनके बच्चे उसके संरक्षक तभी बनेंगे यदि वे स्वयं को उसके योग्य सिद्ध करते हैं (*हरिजन* 31-3-1946)।

'थ्यौरी ऑफ ट्रस्टीषिप' शीर्षक से लिखे गए एक लेख में (*हरिजन*, 16 दिसम्बर, 1939), गाँधी ने लिखा था :

''मुझे यह मानने में संकोच नहीं है कि कई पूँजीवादी मेरे मित्रवत् हैं और मुझसे आषंकित नहीं है। वे जानते हैं कि मैं पूँजीवाद को पूरी तरह समाप्त करना चाहता हूँ और यदि यह पूरी तरह संभव नहीं हो, तो जहाँ तक संभव हो सर्वाधिक प्रगतिषील समाजवादियों और साम्यवादियों को भी समाप्त करना चाहूँगा। परन्तु हमारे तरीके अलग हैं, हमारी भाषाएँ अलग हैं। मेरे 'न्यासिता' के सिद्धान्त में कोई बदलाव नहीं है, निष्चित रूप से कोई छद्मावरण (camouflage) नहीं है। मेरा विष्वास है कि यह सभी सिद्धांतों के बाद भी कायम रहेगा। इसके पीछे दर्षन और धर्म की संस्वीकृति है।

बोध प्रष्न 2

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों के सुझावों के लिये इकाई का अन्त देखें।

1) गाँधी के स्वराज के चार मूल घटक क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) आधुनिक पाष्चात्य सभ्यता पर गाँधी की समालोचना पर चर्चा करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

27.5 सर्वोदय : सामाजिक सेवा के द्वारा आत्मानुभूति (Self-Realisation) के रूप में स्वराज

इस खंड को हम यह उल्लेख करते हुए आरंभ करेंगे कि जहाँ *स्वराज* गाँधी की स्वतंत्रता के विचार का सूचक है, वहीं *सर्वोदय* (सभी के कल्याण) उनके समानता के विचार को संप्रेषित करता है। हम यह भी देखेंगे कि सर्वोदय का गाँधी का सिद्धांत (जिसे प्रायः अहिंसक समाजवाद के रूप में लिया जाता है) उपयोगितावाद, साम्यवाद और उन सिद्धांतों

का एक संषोधित रूप है जो जाति, प्रजाति, रंग और लिंग के आधार पर असमानताओं और अपवर्जनों (exclusions) को न्यायनिर्णीत ठहराते हैं।

''*सर्वोदय*'' वह शीर्षक है जो गाँधी ने जॉन रस्किन की ''अनटू दिस लास्ट'' के अपने भावानुवाद को दिया था। उस पुस्तक में, रस्किन ने आत्म-हित की राजनीतिक अर्थव्यवस्था के विज्ञान की एक नैतिक समालोचना की। उन्होंने हमारे जीवन में ''सामाजिक अनुराग'' की भूमिका प्रस्तुत की। रस्किन के अध्ययन ने गाँधी के जीवन का ''एक तात्कालिक और व्यावहारिक विरूपण'' किया। उन्होंने रस्किन की पुस्तक से तीन पाठ याद किए, जिसके नाम हैं (i) सभी की भलाई में व्यष्टि की भलाई है; (ii) वकील के कार्य का भी उतना ही मूल्य है जितना एक नाई के कार्य का; क्योंकि सभी को अपने कार्य से जीविका कमाने का समान हक है; और (iii) एक श्रमिक का जीवन अर्थात् भूमि के कृषिक और हस्तकलादि का जीवन, जीने योग्य जीवन है।

इन तीन सिद्धांतों में से प्रथम सिद्धांत सर्वोदय (सभी का हित) प्रमुख सिद्धांत है। अन्य दोनों सिद्धांतों का यह स्रोत भी है। गाँधी ने स्पष्ट किया कि वह रस्किन की पुस्तक पढ़ने से पहले भी प्रथम सिद्धांत के बारे में जानते थे। रस्किन की पुस्तक ने इसकी पुष्टि की और इसे आधुनिक कलेवर प्रदान किया। जैसा कि हम नीचे देखेंगे, स्वराज के मामले की तरह सर्वोदय पर गाँधी के विचारों का अधिकांष हिन्दू धर्म की पवित्र पुस्तकों से लिया गया था।

सर्वादय (सर्वहित) पर गाँधी जी की सोच के पीछे कई पहलू हैं। वे इस प्रकार हैं :

1) जीवन में हमारा उद्देष्य आत्मानुभूति अथवा *मोक्ष* है।

2) आत्मानुभूति अथवा *मोक्ष* का अर्थ है, *ब्रह्म* परमात्मा के साथ स्वयं अथवा *आत्मा* की पहचान। इसके लिए अनुषासन अथवा आत्मषुद्धि के योग की आवष्यकता है।

3) *ब्रह्म* के साथ अपनी पहचान की अनुभूति का मार्ग अथवा दूसरे शब्दों में, परमात्मा को प्राप्त करने का मार्ग उसकी सम्पूर्ण रचना अथवा विष्व में परमात्मा का दर्षन करना है।

4) सबसे प्यार और सबकी सेवा इस विष्व में आत्मानुभूति अथवा *मोक्ष* का मार्ग है।

इन विचारों को संप्रेषित करते हुए गाँधी ने निम्नवत लिखा था :

- मानव का अन्तिम उद्देष्य परमात्मा की प्राप्ति है, और सभी को अपने राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक क्रियाकलापों को परमात्मा के दर्षन के अन्तिम उद्देष्य द्वारा दिषा निर्देषित करना होता है। सभी मानव प्राणियों की तत्काल सेवा इस प्रयास का सामान्यतः इसलिए आवष्यक अंग बन जाता है, क्योंकि परमात्मा को तलाष करने का एकमात्र मार्ग उसका उसकी रचना में दर्षन करता है और उसके साथ एकरूप हो जाना है। इसे सभी की सेवा के द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

- इस विद्यमान महत्त्वपूर्ण जीवन में मोक्ष प्राप्त करने के लिए मैं स्वयं की अनुभूति के लिए अधीर हूँ। मेरी राष्ट्रीय सेवा अपनी आत्मा को मांस के बन्धन से मुक्त करने के लिए मेरे प्रषिक्षण का अंग है। इस प्रकार मानते हुए मेरी सेवा को पूर्णतः स्वार्थवष माना जाए। मेरे लिए, मुक्ति का मार्ग अपने देष और उसके माध्यम से मानवता की सेवा में सतत मेहनत में सन्निहित है।

गाँधी ने इनमें से कई विचार हिन्दू धर्म की पवित्र पुस्तकों से प्राप्त किए। उनमें, उन्होंने ''आन्तरिक अनुषासन'' जिसे उन्होंने स्वराज का 'मूल अर्थ' समझा, के मूल्य को स्पष्ट तौर पर प्राप्त किया। उन्होंने लिखा था :

> *स्वराज* का मूल अर्थ स्वषासन है। इस प्रकार का *स्वराज* आन्तरिक रूप से अनुषासित शासन के रूप में माना जा सकता है। स्वतंत्रता की कुछ सीमा है। स्वतंत्रता का अर्थ है, ऐसा लाइसेंस जो चाहे सो करो। स्वराज सकारात्मक है। स्वतंत्रता नकारात्मक है....। *स्वराज* शब्द एक पवित्र शब्द है, वैदिक शब्द है जिसका अर्थ स्व-षासन और स्वतः-निग्रह है, न कि उन सभी बाधाओं से मुक्ति जिसका अर्थ प्रायः 'स्वतंत्रता' होता है।

गाँधी ने युद्ध और हिंसा की व्यर्थता का निरूपण करने वाली *भगवत् गीता* का विवेचन किया। अहिंसा और सत्य के अतिरिक्त, नैतिकता के अन्य सिद्धांत गाँधी के अनुसार जिनका *गीता* उपदेष देती है : *तप, दान* और *यज्ञ* हैं। उन्होंने *भगवत् गीता* के तीसरे अध्याय में 'सेवा का उपदेष' प्राप्त किया। इससे उसे दूसरों के हित की इच्छा करना सिखाया। *गीता पर अपने उपदेषों में* उन्होंने बताया था कि परमात्मा अथवा ब्रह्म सभी प्राणियों में रहता है, जिनमें ''लंगड़ा, पंगु और सताए हुए'' भी शामिल हैं।

सबकी सेवा के विचार पर, गाँधी अपने माता-पिता, वैष्णव सन्त-कवियों, विषेष रूप से नरसिंह मेहता के उपदेषों, तथा रस्किन के लेखों तथा ग़ैर-नैष्ठिक ईसाइयों, विषेष रूप से लियो टॉलस्टाय से भी गहन रूप से प्रभावित हुये।

गाँधी का विष्वास था कि आत्म-निग्रह अैर आत्म-षुद्धि के बिना, हम दूसरों को मोक्षोन्मुख सेवा प्रदान नहीं कर सकते हैं। इस अभियोग को कि ये संन्यासियों के आदर्ष हैं, को अस्वीकार करते हुए उन्होंने कहा कि वे ''सामान्यतः मानवता द्वारा अंगीकरण'' के लिए अभिप्रेत हैं। उन्होंने लिखा था :

> कोई भी कार्यकर्त्ता जिसने अपनी इच्छाओं पर काबू नहीं पाया है, हरिजनों, साम्प्रदायिक एकता, खादी, गौ-रक्षा और गाँव के पुनर्गठन के लिए कोई उचित सेवा प्रदान करने की आषा नहीं कर सकता है। इन जैसे महान् कारणों को मात्र बौद्धिक यंत्र से प्राप्त नहीं किया जा सकता है। उनके लिए आध्यात्मिक प्रयास अथवा आत्मबल की आवष्यकता है।

गाँधी के अनुसार, वह क्षेत्र जिस पर किसी की मोक्ष-प्राप्ति अथवा सभी की निस्वार्थ सेवा के बीच सम्बन्ध बनते हैं, राजनीति का क्षेत्र है नामतः ''मेरे देष की सेवा में कड़ी मेहनत और उसके माध्यम से मानवता की सेवा'' का क्षेत्र। मोक्ष-प्राप्ति और सेवा केन्द्रित राजनीति के बीच सम्बन्ध गाँधी के लेखन और सार्वजनिक कार्यों में एक सतत प्रकरण था। सही अर्थों में, उन्होंने अपनी आत्मकथा निम्न कथन के साथ सम्पन्न की :

> ब्रह्माण्ड और सर्व-व्याप्त सत्य की आत्मा को आमने-सामने देखने के लिए, हमें संसार के निकृष्टतम प्राणी के साथ एक रूप होकर प्रेम करने के लिए सक्षम होना चाहिए। और ऐसा मानव जो उसके पष्चात् महत्त्वाकांक्षी बना रहता है, जीवन के किसी भी क्षेत्र से बाहर नहीं रह सकता है। यही कारण है कि सत्य के प्रति मेरी निष्ठा ने मुझे राजनीति के क्षेत्र की तरफ आकर्षित किया; और मैं जरा सी झिझक के बिना और उस पर भी पूर्ण विनम्रता के साथ कह सकता हूँ कि वे जो यह कहते हैं कि धर्म को राजनीति से कोई लेना-देना नहीं है, नहीं जानते कि धर्म का अर्थ क्या है। आत्म-षुद्धि के बिना जीवित रहने वाले प्रत्येक प्राणी के साथ पहचान असम्भव है; आत्मबुद्धि के बिना, अहिंसा के नियम का अनुपालन एक स्वप्न पात्र बना रहेगा।

उन्होंने *गोखले के भाषणों* पर आमुख में लिखा। गाँधी ने साधुओं, ऋषियों, मुनियों, मौलवियों और पुजारियों से राजनीतिक संन्यासी बनने के लिए आग्रह किया। उन्होंने राजनीतिक कायोकर्त्ताओं से भी आध्यात्मिक और नैतिक रूप से संलग्न रहने के लिए

मुलाकात की। अपने ''लास्ट विल एण्ड टेस्टामेंट'' में, उन्होंने विद्यमान कांग्रेस संगठन को विघटित करने और इसे एक लोक सेवक संघ के रूप में फलने-फूलने की सिफारिष की। उनकी इच्छा थी कि उसके सदस्य उसके द्वारा स्वयं को स्वराज और सर्वोदय कार्यक्रम के बकाया कार्य को पूरा करने में अर्पित करेंगे, जिसे उन्होंने निम्नवत् पंक्तिबद्ध किया :

> भारत को अभी भी अपने शहरों और कस्बों से भिन्न अपने सात सौ हज़ार गाँवों के संदर्भ में सामाजिक, नैतिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करनी है।

गाँधी ने यह भी निर्धारित किया कि लोक सेवक अस्पृष्यता का संत्याग करेंगे और उन्हें ''अन्तर-सामुदायिक एकता, सभी धर्मों के लिए बराबर सम्मान तथा जाति, मत और लिंग की ओर ध्यान दिए बिना सभी के लिए अवसरों और प्रास्थिति की समानता'' के आदर्ष में विष्वास करना होगा।

सर्वोदय के बारे में गाँधी की नैतिक-राजनीतिक संकल्पना पाष्चात्य उपयोगितावाद और परम्परागत जाति प्रथा की असमानताओं और अपवर्जनों (exclusions) दोनों का संषोधित रूप है। उपयोगितावाद की उनकी समालोचना उनके सर्वोदय की प्रस्तावना में देखी जा सकती हे, जो रस्किन की पुस्तक, *अनटू दिस लास्ट* का उनका भावान्तर था। गाँधी ने लिखा था :

> आमतौर पर पश्चिम के लोग मानते हैं कि मानव का सम्पूर्ण कर्तव्य अधिकांष मानवता की प्रसन्नता में वृद्धि करना है और प्रसन्नता का अर्थ मात्र शारीरिक प्रसन्नता और आर्थिक समृद्धि से लगाया जाता है। यदि इस प्रसन्नता पर विजय हासिल करने में नैतिकता के नियम टूट जाते है तो इससे बहुत अधिक अन्तर नहीं पड़ता है। पुनः, चूँकि अधिकांष की प्रसन्नता प्राप्त करना उनका लक्ष्य होता है, पश्चिम वाले यह नहीं विचार करते हैं कि एक अल्पसंख्यक का बलिदान करके इसे प्राप्त करने में कोई हानि भी होती है। इस प्रकार की विचारधारा के परिणाम यूरोप के चेहरे पर व्यापक रूप से अंकित हैं।

1926 में, गाँधी ने निम्नलिखित शब्दों के माध्यम से उपयोगितावाद और सर्वोदय में अन्तर स्पष्ट किया :

> एक अहिंसा का उपासक उपयोगितावादी सूत्र (अधिसंख्यक का अधिकतम हित) के प्रति योगदान नहीं कर सकता है। वह सभी के अधिकतम हित के लिए संघर्ष करेगा और अपने आदर्ष को प्राप्त करने में अपने प्राणों का उत्सर्ग कर देगा। वह स्वयं मरते-मरते भी शेष लोगों की सेवा करेगा। सभी के अधिकतम हित में निरपवाद रूप में अधिसंख्यक का हित शामिल होता है और इसीलिए, वह और उपयोगितावादी अपने जीवन में कई मुद्दों पर अभिमुख होंगे; परन्तु ऐसा समय भी आ सकता है जब वे एक-दूसरे से अलग हो जाएँगे और भिन्न दिषाओं में कार्य भी करेंगे। उपयोगितावादी तार्किक होने के कारण कभी भी स्वयं का बलिदान नहीं करेगा। निरपेक्षवादी (अर्थात् सार्वभौमवादी अथवा अहिंसा का उपासक) स्वयं का बलिदान भी कर देगा।

बोध प्रष्न 3

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों के सुझावों के लिये इकाई का अन्त देखें।

1) गाँधीवादी सर्वोदय के आवष्यक घटक क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सर्वोदय की संकल्पना पर भगवत् गीता के प्रभाव को उजागर करें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

27.6 सत्याग्रह बनाम शान्तिपूर्ण विरोध

विरोध करने की गाँधीवादी अहिंसक राजनीतिक कार्रवाई तथा सामाजिक और राजनीतिक सत्ता के असत्यपूर्ण और हिंसक तरीकों को बदलने का नाम सत्याग्रह है। 1906-14 के दौरान, गाँधी ने उस जाति-भेद की नीति का विरोध करने के लिए सफलतापूर्वक राजनीतिक कार्रवाई के इस तरीके का प्रयोग किया, जिसे दक्षिण अफ्रीका की ब्रिटिष उपनिवेषी सरकार द्वारा भारतीय प्रवासियों के विरुद्ध अपनाया गया था। भारत में, उन्होंने कई स्थानीय सत्याग्रहों का नेतृत्व किया जिनमें से कुछ उल्लेखनीय थे जैसे चम्पारन, अहमदाबाद, वैयकॉम, बरदौली और खेड़ा में हुए सत्याग्रह। उन्होंने 1919 में रॉलट एक्ट के विरुद्ध किए गए सत्याग्रह से आरंभ होकर कई अखिल भारतीय सत्याग्रह आन्दालनों का भी नेतृत्व किया।

गाँधी ने स्वीकार किया कि उनके सत्याग्रह का सिद्धांत कुछ सीमा तक हेनरी डेविड थोरो के लेखों से प्रभावित हुआ था। थोरो के निबन्ध, ''आन द ड्यूटी ऑफ सिविल डिसआबीडिएंस'' में गाँधी ने राज्य के निग्रही लक्षणों पर अपने विचारों का तथा अपनी निजी चेतनता के व्यष्टिगत आभार पर पुष्टीकरण पाया। गाँधी ने लिखा था, ''थोरो और रस्किन से मैं अपने संघर्ष के पक्ष में तर्क तलाष कर सकता था।''

गाँधी के दक्षिण अफ्रीका में जातिभेद के विरुद्ध आरंभिक संघर्षों का 'षांतिपूर्ण विरोध' के रूप में वर्णन किया गया था। परन्तु शीघ्र ही उन्हें अंग्रेजों की यह शब्दावली आंषिक रूप से असन्तोषजनक महसूस हुई, क्योंकि यह आम भारतीय की समझ से परे थी और अंषतः इसलिए कि यह उनके राजनीतिक संघर्ष के तरीके के विषेष स्वरूप को सामने नहीं ला पायी। इसी कारण, 1916 में उन्होंने अपनी साप्ताहिकी ''इंडियन ओपीनियन'' के पाठकों को एक वैकल्पिक नाम का सुझाव देने के लिए आमंत्रित किया। सबसे श्रेष्ठ सुझाव *सदाग्रह* प्राप्त हुआ जिसका अर्थ था ''नेक कार्य में दृढ़ता''। गाँधी ने इसे बदलकर *सत्याग्रह* कर दिया, क्योंकि यह उनके अधिमान्य विचार ''सत्य-बल'' को संप्रेषित करता था। उन्होंने अपनी पसन्द की निम्न शब्दों में व्याख्या की :

> सत्य में प्रेम अन्तर्निहित है तथा आग्रह (दृढ़ता) संकट की सूचक है, अतः इसीलिए यह बल का पर्यायवाची बन जाता है। इस प्रकार मैंने भारतीय आन्दोलन को ''सत्याग्रह'' कहना आरंभ किया, जिसका अर्थ है ऐसा बल जो सत्य और प्रेम अथवा अहिंसा के लिए पैदा हुआ है और उन्होंने 'षांतिपूर्ण विरोध' शब्दावली का प्रयोग छोड़ दिया।

गाँधी ने *शारीरिक बल = पषु बल = शस्त्र बल* को *आत्म बल = प्रेम बल = सत्य-बल* से अलग कर दिया। उन्होंने पूर्ववर्ती को हिंसक तरीके के रूप में बताया जिसे, आधुनिक सभ्यता में और द्वारा अपनाया जाता है। उन्होंने बताया कि सत्याग्रह आत्मबल अथवा सत्य के बल पर विष्वास करता है और यह स्वराज के लिए उचित शब्द है। उन्होंने लिखा था :

> सत्याग्रह व्यक्तिगत पीड़ा के द्वारा अधिकांष को प्राप्त करने का एक तरीका है; यह शस्त्रों द्वारा विरोध के प्रतिकूल है। जब मैं किसी ऐसे कार्य को करने से मना करता हूँ जो मेरी चेतना के विरुद्ध है, मैं आत्मबल का प्रयोग करता हूँ। उदाहरणार्थ, आज की सरकार ने एक कानून पारित किया है जो मुझ पर लागू होता है। मैं इसे पसन्द नहीं करता हूँ। यदि मैं हिंसा का प्रयोग करके शासन को वह कानून समाप्त करने के लिए मज़बूर करता हूँ, तो मैं शक्ति बल का नियोजन कर रहा हूँ। यदि मैं कानून का पालन नहीं करता हूँ और उसके उल्लंघन के लिए शान्ति को स्वीकार करता हूँ, तो मैं आत्मबल का प्रयोग करता हूँ। इसके लिए आत्म बलिदान की आवष्यकता होती है।

गाँधी के अनुसार भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के लिए सत्याग्रह व्यावहारिक रूप से आवष्यक तथा नैतिक रूप से वांछनीय था। उन्होंने कहा था कि चूँकि ''अंग्रेज़ प्रबलता से सषस्त्र हैं'', भारतीयों को उनकी बराबरी का सषस्त्र बनने अथवा प्रभावी ढंग से निपटने में अनेकानेक वर्ष लगेंगे। इस व्यावहारिक कठिनाई से भी अधिक, गाँधी ने हिंसा के अनैतिक तरीके को स्वीकृति नहीं दी। उनका इषारा था कि ''विषाल पैमाने पर भारत को सषस्त्र बनाना उसे यूरोपियन बनाना है'' अथवा, दूसरे शब्दों में, नैतिक रूप से दोषयुक्त आधुनिक यूरोपियन सभ्यता द्वारा निरन्तर पथभ्रष्ट होते रहना है।

गाँधी के अनुसार, 'षान्तिपूर्ण विरोध' की तुलना में सत्याग्रह के विषिष्ट लक्षण निम्नवत् हैं:

i) जबकि शान्तिपूर्ण विरोधी अपने विपक्षी के प्रति घृणा का आश्रय लेते है, सत्याग्रही अपने विरोधियों के प्रति प्रेमभाव रखते हैं।

ii) शान्तिप्रिय विरोधी, सत्याग्रहियों से भिन्न, अपने विपक्षियों को परेषान कर सकते है और चोट पहुँचा सकते हैं।

iii) सत्याग्रह, शांतिपूर्ण विरोध से भिन्न, अपने प्रियजनों पर भी लागू किया जा सकता है।

iv) शान्तिपूर्ण विरोध कमज़ोर अथवा असहायों द्वारा किया जाने वाला विरोध है और इसमें हिंसा के प्रयोग को अलग नहीं किया जा सकता, जबकि सत्याग्रह शक्तिषाली द्वारा नैतिक राजनीतिक कार्रवाई है और इसमें हिंसा शामिल नहीं है। स्वयं को कमज़ोर मानने के विष्वास में शान्तिपूर्ण विरोधी शुरुआती मौके पर संघर्ष को छोड़ने के लिए प्रवृत्त होगा। ''दूसरी तरफ'' गाँधी ने लिखा, ''यदि हम स्वयं को शक्तिषाली मानते हुए सत्याग्रह का आश्रय लेते हैं, इसके दो निष्चित परिणाम होंगे। शक्ति के विचार से प्रोत्साहित होकर हम प्रतिदिन और अधिक मज़बूत होते जाएँगे। हमारी शक्ति में वृद्धि से, हमारा सत्याग्रह भी अधिक प्रभावी होगा और इसे छोड़ने के लिए हम कभी भी किसी भी अवसर की बाट नहीं देखेंगे।''

27.6.1 सत्याग्रह के सिद्धांत और पद्धतियाँ

सत्याग्रह सत्य, अहिंसा और तप के सिद्धांतों पर आधारित है। गाँधी ने 9 जनवरी 1920 को इलाहाबाद में लॉर्ड हण्टर की अध्यक्षता में हुई अव्यवस्था जाँच समिति (Disorders Inquiry Committee) के समक्ष अपने मौखिक निवेदन में इसका स्पष्टीकरण दिया था। सुसंगत प्रष्न और उनके जवाब नीचे यथास्थिति दिए जाते हैं:

प्रष्न : गाँधी महोदय, मैं यह मानता हूँ कि सत्याग्रह आन्दोलन के रचयिता आप हैं?

उत्तर : हाँ, श्रीमान।

प्रष्न : आप इसे संक्षिप्त में समझाएँ?

उत्तर : यह एक ऐसा आन्दोलन है जो हिंसा के तरीकों को प्रतिस्थापित करने के लिए अभिप्रेत तथा पूर्णतः सत्य पर आधारित आन्दोलन है। यह जैसा कि मैंने कल्पना की है, राजनीतिक क्षेत्र में घरेलू कानून का एक विस्तार है और अपने अनुभव से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि इस आन्दोलन और एकमात्र इसी आन्दोलन से भारत षिकायतों के निवारण के लिए देष के इस सिरे से उस सिरे तक फैली हुई हिंसा की संभावनाओं से छुटकारा पा सकता है।

प्रष्न : विषेष कानूनों के न्याय और अन्याय के प्रति लोगों के मत भिन्न होते हैं?

उत्तर : यही मुख्य कारण है जिससे हिंसा कम हो सकती है तथा एक सत्याग्रही अपने विरोधी को स्वतंत्रता और उदारता के वे सभी अधिकार देता है, जो वह स्वयं के लिए आरक्षित करता है। वह व्यक्तिगत तौर पर चोटग्रस्त होते हुए संघर्ष करेगा।

गाँधी का धर्मषास्त्र की परम्परा में विष्वास था, जिसके अनुसार धर्म जो 'घर' (सुदृढ़ होना, कायम रहना अलावा समर्थन करना) से व्युत्पन्न है, ब्रह्माण्डों को विनियमित करने वाले नैतिक कानून का हवाला देता है। इसका सार सत्य है जिसकी जड़ें (अस्तित्व, वास्तविकता, अधिकार, जो है और जो होगा) सत् हैं। गाँधी ने लिखा था :

शब्द सत्य सत् शब्द से व्युत्पन्न है, जिसका अर्थ है होना। और सत्य के अलावा वास्तव में कुछ नहीं है अथवा विद्यमान नहीं है। यही कारण है कि सत् अथवा सत्य परमात्मा का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण नाम है। वास्तव में यह कहना कि परमात्मा सत्य है, की तुलना में, यह कहना अधिक ठीक होगा कि सत्य भगवान है। यह अनुभूति हो जाएगी कि सत् अथवा सत्य ही सही है और परमात्मा का पूर्णरूपेण सही नाम है।

चूँकि ''सत्य के अलावा वास्तव में कुछ नहीं है अथवा विद्यमान नहीं है'', गाँधी का कहना है कि व्यावहारिक-राजनीतिक क्षेत्र भी इसमें शामिल होने चाहिए। दूसरे शब्दों में, गाँधी के लिए सत्य अथवा नैतिकता से राजनीति को अलग करना स्वीकार्य नहीं है। उन्होंने कहा था :

कुछ दोस्तों ने मुझसे कहा है कि सत्य और अहिंसा का राजनीति अथवा सांसारिक, क्रियाकलापों में कोई स्थान नहीं है। मैं इससे सहमत नहीं हूँ। मेरे लिए व्यष्टि के उद्धार के उपाय के रूप में उनका कोई उपयोग नहीं है। दैनिक जीवन में उन्हें शामिल करना और उनका अनुप्रयोग करना अभी तक मेरा परीक्षण रहा है।

गाँधी का सत्याग्रह सत्य और अहिंसा को राजनीतिक क्षेत्र में शामिल करने का एक परीक्षण है।

गाँधी के अनुसार, यद्यपि सत्य निरपेक्ष है, इसके बारे में हमारा ज्ञान और अनुभव सापेक्ष तथा आंषिक है। जिसे हम सत्य मानते हैं वह दूसरों के लिए असत्य हो सकता है। वस्तुतः, सत्याग्रही यह मानता है कि उसके विरोधी अथवा उस पर जुल्म करने वाले भी सत्याग्रही हैं जो इस आधार पर कार्य करते हैं जिसे वे सत्य महसूस करते हैं। इसका कारण यह है कि अहिंसा सत्य की खोज का साधन है। गाँधी लिखता है, ''मूल सिद्धांत जिस पर अहिंसा का आचरण आश्रित है, यह है कि जो किसी एक के लिए हितकारी होता है वह समान रूप से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के लिए भी लागू होता है। सार रूप में सम्पूर्ण मानवता एक जैसी है। जो कुछ एक के लिए संभव है, वही प्रत्येक के लिए संभव है।'' सापेक्ष सत्य के आधार पर कार्य करते हुए, सत्याग्रही मूल संघर्ष का निवारण चाहते हैं और प्रतिद्वन्द्वी सत्य के दावों की वैधता को उचित ठहराने के अहिंसक मार्ग के माध्यम से सामाजिक तालमेल सुनिष्चित करते हैं। गाँधी ने लिखा है :

> ऐसा प्रतीत होता है कि इस दैनिक शरीर में सत्य की पूर्ण अनुभूति की असंभावना ने प्राचीन सत्य की खोज करने वाले को अहिंसा का प्रषंसक बना दिया। उसके सामने प्रष्न उपस्थित हुआ कि क्या वह उन्हें बर्दाष्त करे जो उसके लिए परेषानियाँ पैदा करते हैं अथवा उन्हें नष्ट कर दे। इस जिज्ञासु ने महसूस किया कि वह जो दूसरों को नष्ट करने में लगा रहा, आगे का कोई मार्ग नहीं बना सका अपितु साधारणतया वहीं रुका रहा जहाँ वह था, जबकि वह आदमी जिसने उन्हें बर्दाष्त किया जिन्होंने उसके लिए परेषानियाँ पैदा कीं, आगे बढ़ गया और कई बार दूसरों को भी अपने साथ ले गया... जितना अधिक उसने हिंसा की उतना ही वह सत्य से वंचित होता गया। ऐसा क्यों, कल्पित शत्रु से संघर्ष करते समय उसने अन्दर के शत्रु की ओर ध्यान नहीं दिया।

सत्याग्रही विरोधी अथवा उत्पीड़क को समाप्त करने के लिए नहीं, अपितु सम्पूर्ण विवादग्रस्त अथवा उत्पीड़क सम्बन्ध का पुनर्गठन करने के लिए सत्य-बल अथवा प्रेम-बल का प्रयोग करते हैं, जिससे आरंभिक संघर्ष के प्रति दोनों दल एक विषेष प्रकार की पारस्परिकता और नैतिक अन्तनिर्भरता महसूस कर सकें। सत्याग्रह के द्वारा, उत्पीड़न के षिकार, अपने विष्वास और कार्यों से इनकार करने वाले अपने कपटपूर्ण सत्य से अपने उत्पीड़कों को बन्धनमुक्त करने में सहायता करके स्वयं की मुक्ति चाहते हैं। गाँधी ने *हिन्द स्वराज* में लिखा था कि ''सत्याग्रह प्रयोगकर्त्ता और उसे जिस पर इसे प्रयोग किया जाता है, को महिमान्वित करता है।'' गाँधी ने लिखा है :

> अपने नकारात्मक स्वरूप में इस (अहिंसा) का अर्थ किसी जीवित प्राणी को, चाहे शरीर से अथवा मन से, चोट पहुँचाना नहीं है। अतः किसी गलत कार्य करने वाले व्यक्ति को मैं चोट नहीं पहुँचा सकता, न उसके प्रति कोई दुर्भावना रख सकता और इस प्रकार उसे कोई मानसिक पीड़ा भी नहीं दे सकता। अपने सकारात्मक स्वरूप में, अहिंसा का अर्थ अति व्यापक प्रेम, महानतम उदारता से है। यदि मैं अहिंसा का अनुगामी हूँ, मैं अपने दुष्मन अथवा मुझसे अजनबी से वैसा ही प्रेम करूँगा जैसे मैं गलत काम करने वाले अपने पिता अथवा पुत्र से करूँगा। इस क्रियात्मक अहिंसा में अवष्यमेव रूप से सत्य और निर्भीकता शामिल हैं।

ऊपर आरंभ में जो कुछ कहा गया है, के परिप्रेक्ष्य में, हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि गाँधी के लिये जो दूसरों को नुकसान पहुँचाने के लिए इनकार करने में विष्वास रखे, नैतिक और व्यावहारिक सच का एक नकारात्मक परीक्षण है। इसका सकारात्मक परीक्षण दूसरों का कल्याण करने के लिए अभिप्रेत कार्य है।

> हमारी इच्छाओं और उद्देष्यों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता है। स्वार्थपूर्ण और स्वार्थरहित। सभी स्वार्थपूर्ण इच्छाएँ अनैतिक हैं, जबकि दूसरों का हित करने के लिए स्वयं को उत्कृष्ट बनाने की इच्छा वास्तव में नैतिक है। सर्वाधिक नैतिक नियम यह है कि हमें मानवता की भलाई के लिए अथक रूप से कार्य करना चाहिए।

अब तक हमने सत्याग्रह के दो घटकों, नामतः सत्य और अहिंसा पर विचार किया है। तीसरा घटक तप (स्वयं कष्ट उठाना) है। दूसरे के प्रति प्रेम पर आधारित कार्रवाई जैसा हमने आरंभ में देखा, उस प्रेम की परीक्षा है। व्यक्तिगत रूप से कष्ट झेलना, गाँधी लिखते हैं, '' अहिंसा का सार है और दूसरों के प्रति हिंसा के लिए चुना गया एवजी (substitute) है''। यह समझना चाहिए कि सत्याग्रहियों द्वारा स्वयं कष्ट झेलना उनकी कायरता अथवा कमज़ोरी नहीं है; यह उन लोगों की अपेक्षा साहस के उत्कृष्ट स्वरूप पर आधारित है जो हिंसा का आश्रय लेते हैं और यह अपने विरोधी अथवा उत्पीड़क के नैतिक उत्थान में सहायता के लिए अभिप्रेत है।

संघर्ष समाधान की सत्याग्रही विधि में, स्वयं प्रताड़ना युक्तिसंगतता की पूरक भूमिका निभाती है। विवेचना के माध्यम से दूसरों को तैयार करना वास्तव में सत्याग्रह का सार है। परन्तु सत्याग्रह मूलभूत सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक अथवा वैचारिक संघर्ष, जिसमें युक्तिसंगत समझौता आसानी से अथवा तत्काल संभव नहीं होगा, के समाधान में युक्ति की सीमाओं को मान्यता प्रदान करता है। वास्तव में, गाँधी का आग्रह था कि सत्याग्रह की प्रत्यक्ष कार्रवाई तकनीकें विरोधियों अथवा उत्पीड़कों के साथ विवेचना की आम प्रक्रियाओं को लागू करने के बाद ही तथा मात्र उनकी युक्तिसंगत सहमति प्राप्त करने अथवा बातचीत करने के लिए लागू की जानी चाहिए। उन्होंने लिखा है :

> चूँकि सत्याग्रह प्रत्यक्ष कार्रवाई के सर्वाधिक शक्तिषाली तरीकों में से एक है, एक सत्याग्रही सत्याग्रह का आश्रय लेने से पहले दूसरे सभी उपायों की परीक्षा करता है। इसलिए, वह अविचल और निरन्तर निर्वाचित प्रधिकारी के पास पहुँचेगा, वह जनमत को अपील करेगा, जनमत के बारे में षिक्षा देगा, शान्तिपूर्वक अपनी इस स्थिति उन सबके समक्ष बताएगा जो उसे ध्यान से सुनना चाहते हैं और वह जब ये सारे प्रयास विफल हो जाएँगे, सत्याग्रह का आश्रय लेगा।

एक सत्याग्रह अभियान में, सत्याग्रही (1) विवेचना अर्थात् अपने विरोधियों को उनकी गलत स्थिति के बारे में समझाकर और साथ-साथ उनकी प्रतिकूल दलीलों के लिए तैयार रहकर; और (2) सत्याग्रहियों की आत्म-प्रताड़ना के माध्यम से विरोधियों को अपील करके विवादित सामाजिक ''व्यवस्था'' अथवा मानदण्डों की सचाई को वैध बनाना चाहते हैं।

सत्याग्रह के अनेक तरीके हैं : (1) सत्याग्रहियों द्वारा शुद्धिकारी अथवा पष्चात्तापपूर्ण कार्य, जैसे संकल्प लेना, प्रार्थनाएँ करना और व्रत रखना; (2) असहयोग के कार्य, जैसे उपेक्षा (बायकॉट) करना, हड़ताल करना, उपवास करना और हिजरत (अर्थात् स्वैच्छिक प्रवजन); (3) नागरिक अवज्ञा के कार्य, जैसे धरना देना, करों का भुगतान न करना और विषिष्ट कानूनों की अवज्ञा करना; और (4) सामाजिक सुधार और सामाजिक सेवा का रचनात्मक कार्यक्रम, जैसे अन्तर-समुदाय एकता को बढ़ावा देना, अस्पृष्यता दूर करना, प्रौढ़ षिक्षा, तथा आर्थिक और सामाजिक असमानताओं का निराकरण।

सत्याग्रही, कार्यक्रम के प्रत्येक चरण में, सत्य का आचरण जैसा वे इसे देखते हैं, करते समय, अपने निजी दोषों पर विचार करते हैं तथा विरोधियों को सत्याग्रही की स्थिति को त्रुटिपूर्ण सिद्ध करने के लिए प्रत्येक मौका देते हैं। सत्याग्रह में ''हिंसा का प्रयोग वर्जित

है क्योंकि मानव निरपेक्ष सत्य को जानने में सक्षम नहीं है और इसलिए दंड देने के लिए भी सक्षम नहीं है।'' ध्यान देने योग्य आदर्ष समुदायवादी सत्य के स्वतः विनियमित समाज का आदर्ष है, जिसमें प्रत्येक स्वयं पर इस तरह शासन करना है जिससे वह अपने पड़ौसी के लिए कभी भी किसी भी प्रकार की परेषानी का कारण न बने। जोन बॉण्डुरां लिखती हैं, ''सत्याग्रह का दावा अहिंसक कार्रवाई करके किया जाता है, मानवीय आवष्यकताओं की पूर्ति द्वारा यथा निर्णीत सत्य। पारस्परिक संतुष्टि और सहमति से हुए समाधान के स्वरूप में विलय हो जाएगा''। इस प्रकार, सत्याग्रहियों द्वारा अनुपालनीय महत्त्वपूर्ण क्रियात्मक सिद्धांत सत्याग्रहियों द्वारा सापेक्षता, अहिंसा और सहिष्णुता तथा स्वयं प्रताड़ना के रूप में सत्य को ग्रहण करना है। गाँधी ने निम्न परिच्छेद में इन क्रियात्मक सिद्धांतों को न्यायसंगत ठहराया :

> सत्याग्रह के अनुप्रयोग में मैंने पाया कि आरंभिक चरणों में सत्य के अनुसरण ने अपने विरोधियों के ऊपर की जाने वाली हिंसा को स्वीकार नहीं किया, अपितु उसे धैर्य और सहानुभूति द्वारा गलती करने से रोकना चाहिए। क्योंकि जो कुछ एक को सत्य प्रतीत होता है, दूसरे को वही असत्य प्रतीत होता है।

सच्चे हितों के बारे में लोगों की धारणा और न्याययुक्त कानूनों में अन्तर होता है। यही मुख्य कारण है जिससे हिंसा समाप्त हो जाती है और एक सत्याग्रही अपने विरोधी को स्वतंत्रता और उदारता की भावनाओं को वही अधिकार देता है जो वह स्वयं के लिए आरक्षित रखता है और वह स्वयं को व्यक्तिगत तौर पर प्रताड़ित करके संघर्ष करेगा।

लोकतंत्र का विकास संभव नहीं है, यदि हम दूसरे पक्ष को सुनने को तैयार न हों। हम उस युक्ति के दरवाज़े बंद कर देते हैं, जब हम अपने विरोधियों को सुनने अथवा सुने जाने के लिए मना कर देते हैं और उनका मज़ाक बनाते हैं। यदि अहिष्णुता आदत बन जाए, वहाँ हम सत्य से भटक जाने का जोखिम उठाते हैं। जबकि प्रकृति ने हमको सीमित समझदारी प्रदान की है, हमें हमको दिए गए ज्ञान के अनुसार निर्भयतापूर्वक कार्य करना चाहिए। हमें हमेषा अपना दिमाग खुला रखना चाहिए और यह जानने के लिए तैयार रहना चाहिए कि जिसे हम सत्य समझते थे, वास्तव में वह कुल मिलाकर असत्य था। दिमाग का यह खुलापन हमारे अन्दर सत्य को मजबूत करता है।

बोध प्रष्न 4

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों के सुझावों के लिये इकाई का अन्त देखें।

1) गाँधी ने शान्तिपूर्ण विरोध और सत्याग्रह में किस प्रकार अन्तर किया?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) सत्याग्रह के तरीकों का संक्षिप्त में वर्णन करें।

.....

.....

.....

.....

.....

27.6.2 सत्याग्रह पर कुछ मूल्यात्मक टिप्पणियाँ

सत्याग्रह के गाँधी के सिद्धांत और अभ्यास पर विचार करते समय अनेक समालोचनाएँ बनी रहती हैं कि अहिंसा और स्वतः प्रताड़ना हिंसा करने वालों के विरुद्ध अव्यवहारिक तरीके हैं। इनका कहना है कि गाँधीवादी तरीका ''दूसरे संसार का'' तथा ''अमानवीय के प्रतिफल'' है। गाँधी ने कहा था कि अहिंसा और स्वतः प्रताड़ना 'असांसारिक नहीं' अपितु अवष्यमेव सांसारिक लोगों के लिए है। उन्होंने स्वीकार किया कि इन सिद्धांतों पर अमल करना बहुत मुष्किल था, परन्तु उनका आग्रह था कि हमें इनके आधार पर आगे बढ़ने अथवा उन पर कायम रहने की आवष्यकता है। उन्होंने लिखा था, ''षरीर निर्वाह करते समय पूर्ण अहिंसा यूक्लिड के बिन्दु अथवा सरल रेखा जैसा सिद्धांत है।'' गाँधी ने सही कहा था कि यह वांछनीय है और एक प्रबल अहिंसक समाज की स्थापना करना संभव है।

इस पर अभी भी आपत्ति की जा सकती है कि सत्याग्रह सत्याग्रही से मृत्यु पर्यन्त भी स्वतः प्रपीड़न की माँग करता है। यह सत्य है कि स्वतः प्रपीड़न सत्याग्रह का एक प्रमुख घटक है। तथापि, प्रपीड़न के खिलाफ हिंसात्मक और अहिंसात्मक विरोध में, आत्म बलिदान भी अन्तर्ग्रस्त होता है। यही कारण है कि गाँधी ने सत्याग्रह के प्रयोग की अनुमति मात्र उस स्थिति में दी, जब संघर्ष मौलिक मुद्दों पर हो और अहिंसा के सभी अपेक्षाकृत सौम्य तरीके विफल हो गए हों। उन्होंने 1921 में लिखा था, ''मैं उस समय गहन रूप से व्यथित होऊँगा, यदि प्रत्येक संकल्पनीय अवसर पर हम में प्रत्येक स्वयं अपने ऊपर कानून बनाकर रहेगा और हमारी भावी राष्ट्रीय सभा की प्रत्येक कार्रवाई की सुनहरी मापदंड से संवीक्षा करेगा। मैं अधिकतर मामलों में अपने निर्णय को राष्ट्रीय प्रतिनिधियों को अभ्यर्पित कर दूँगा।'' परन्तु जब अहिंसक विरोध के सभी सौम्य तरीके विफल हो जाएं और उसके बाद भी हिंसक उत्पीड़न की स्थिति बनी रहे, गाँधी का कहना था कि सत्य के लिए अहिंसक योद्धा के मृत्यु पर्यन्त भी स्व-प्रपीड़न हिंसक विरोधी की हार में मृत्यु की तुलना में व्यष्टिगत स्वतंत्रता के लिए कहीं बेहतर स्थिति है।

गाँधी ने हिंसक विरोध की तुलना में राजनीतिक विरोध और सामाजिक परिवर्तन के माध्यम से सत्याग्रह के गुण दोषों की स्वयंमेव कई बार व्याख्या की है। 1924 में, इन अफवाहों पर प्रतिक्रिया करते हुए कि उन्हें संभवतया सोवियत संघ जाने के लिए निमंत्रण मिलने वाला था, गाँधी ने लिखा था :

> मैं सफलता के लिए लघु हिंसा की पीड़ा में विष्वास नहीं करता हूँ। वॉल्सनिक के उन दोस्तों जिनका ध्यान मुझ पर केन्द्रित है को महसूस करना चाहिए कि मैं कितने भी अधिक श्रेष्ठ उद्देष्यों से सहानुभूति रखूँ अथवा उनकी प्रषंसा करूँ, मैं श्रेष्ठतम कारणों के लिए भी हिंसक तरीकों का ऐसा विरोधी हूँ जो कभी समझौता नहीं करता। अतः हिंसा के विद्यालय और मेरे बीच वास्तव में कोई तालमेल नहीं हो सकता।

दो साल बाद, गाँधी ने हिंसक और अहिंसक तरीकों के बीच निम्न स्पष्टीकरण किया :

> मेरा अहिंसात्मक विरोध एक भिन्न योजना पर क्रियात्मक विरोध है। बुराई करने वाले के अहिंसात्मक विरोध का यह अर्थ नहीं है कि किसी भी प्रकार का विरोध न किया जाए, अपितु इसका अर्थ यह है कि बुराई का बुराई से नहीं अपितु अच्छाई से विरोध किया जाए। इस प्रकार विरोध एक श्रेष्ठतर और निरपेक्षतः प्रभावी क्षेत्र के लिए अंतरित है।

जैसा कि हमने ऊपर देखा है, लियो टॉलस्टाय की रचना *''द किंगडम ऑफ गॉड इज़ विदिन यू'* ने अहिंसक विरोध की आधुनिक अवस्था के विरोधात्मक स्वरूप और उसके प्रति वचनबद्धता पर गाँधी के विचारों पर भारी प्रभाव छोड़ा। गाँधी ने स्वीकार किया कि टॉलस्टाय को पढ़ने से उन्हें ''सार्वभौमिक प्रेम की अनन्त संभावनाओं'' की अनुभूति हुई और उन्हें ''अहिंसा में दृढ़ विष्वासी'' बना दिया। गाँधी और टॉलस्टाय एक-दूसरे के अनुरूप थे। गाँधी को अपने अन्तिम पत्र में, टॉलस्टाय ने स्वीकार किया कि दक्षिण अफ्रीका में उनका सत्याग्रह आन्दोलन उत्पीड़ित द्वारा बन्धनमुक्ति के संघर्ष का एक नया और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तरीका था।

टॉलस्टाय की तरह, आइंस्टीन ने भी गाँधीवादी सत्याग्रह की गहन प्रषंसा में लिखा है। गाँधी के 70वें जन्मदिन के लिए एक अभिनंदन ग्रंथ (festschrift) में प्रकाषित श्रद्धांजलि में उन्होंने लिखा था :

> राजनीतिक इतिहास में गाँधी अपूर्व हैं। उन्होंने उत्पीड़ित लोगों के मुक्ति संघर्ष के लिए पूर्णतः नई और मानवीय तकनीक का अन्वेषण किया है और उस पर महानतम ऊर्जा और समर्पण के साथ अमल किया है। सभ्यतामूलक विष्व के माध्यम से विचार करने वाले लोगों पर जो नैतिक प्रभाव उन्होंने छोड़ा है, वह प्रभाव उस प्रभाव से अधिक टिकाऊ होगा जो संभवतया अपने अत्यधिक पषुबल से हमारे वर्तमान युग में प्रतीत होता है। राजनीति विषारदों का कार्य तभी स्थायी होता है, यदि वे अपने व्यक्तिगत उदाहरण के माध्यम से और उस प्रभाव के बारे में षिक्षा देकर अपने लोगों में नैतिक बलों का आह्वान कर पाएँ और एकता कायम कर सकें।

बोध प्रष्न 5

नोटः i) अपने उत्तर के लिए नीचे दिए गए रिक्त स्थान का प्रयोग करें।

ii) अपने उत्तरों के सुझावों के लिये इकाई का अन्त देखें।

1) सत्याग्रह की संकल्पना का समालोचनात्मक निर्धारण करें।

.....

.....

.....

.....

27.7 सारांष

इस इकाई में, आपने गाँधीवाद के प्रमुख बौद्धिक घटकों के बारे में पढ़ा है जैसे धर्म, स्वराज, सर्वोदय और सत्याग्रह। इस इकाई में कुछ प्रसिद्ध विचारकों का आपसे परिचय कराया गया, जिनके विचारों और लेखों ने महात्मा गाँधी की सामाजिक और राजनीतिक सोच को मूर्त्त रूप दिया। जैसा आपने सीखा है, स्वराज की संकल्पना में बहिर्मुखी और

अन्तर्मुखी दोनों आयाम हैं। संसदीय स्वराज के विचार और सर्वोदय पर पृथक् से विस्तार में चर्चा की गई है। सत्याग्रह और शान्तिपूर्ण विरोध की संकल्पना और सत्याग्रह के सिद्धांत और तरीकों की, अन्तिम पर न्यूनतम नहीं, व्याख्या की गई है। यह इकाई सत्याग्रह के समालोचनात्मक निर्धारण के साथ समाप्त हुई है। आषा की जाती है कि अब आप गाँधीवादी विचारों के मौलिक रूप को समझने में अधिक बेहतर स्थिति में होंगे।

27.8 कुछ उपयोगी पुस्तकें

आर. अय्यर, *द मॉरल एण्ड पॉलिटिकल थॉट ऑफ महात्मा गाँधी* (ओ.यू.पी., 2000)।

ए. जे. पारेल, (संपा.), *गाँधी : हिन्द स्वराज एण्ड अदर राइटिंग्स* (फाउण्डेषन बुक्स, न्यू दिल्ली, 1997)।

भीकू पारेख, *कॉलॉनिअलिज़्म, ट्रेडिषन एण्ड रिफॉर्म : ऐन एनैलिसिस ऑफ गाँधीज़ पॉलिटिकल डिस्कोर्स* (न्यू दिल्ली : सेज, 1989)।

डी. डैल्टन, *गाँधी'ज़ पॉवर* (ओ.यू.पी. 1993)।

थॉमस पन्थम, *पॉलिटिकल थ्योरिज़ एण्ड सोषयल रिकन्स्ट्रक्षन : ए क्रिटिकल सर्वे ऑफ द लिट्रेचर ऑन इण्डिया* (न्यू दिल्ली : सेज 1995), चेप्टर 4 : ''गाँधी : स्वराज, सर्वोदय एण्ड सत्याग्रह।''

थॉमस पन्थम, ''हेबरमासज़ प्रैक्टिकल डिसकोर्सिज़ एण्ड गाँधी'ज़ सत्याग्रह'', इन भीखू पारेख एण्ड थॉमस पन्थम, (सं.) *पॉलिटिकल डिस्कोर्सिज़ : एक्सप्लोरेषन्स इन इण्डियन एण्ड वैस्टर्न पॉलिटिकल थॉट* (न्यू दिल्ली : सेज, 1987)।

27.9 बोध प्रष्नों के उत्तर

बोध प्रष्न 1

1) देखें भाग 27.1

2) देखें भाग 27.2

बोध प्रष्न 2

1) देखें भाग 27.3

2) देखें भाग 27.4

बोध प्रष्न 3

1) देखें भाग 27.5

2) देखें भाग 27.5

बोध प्रष्न 4

1) देखें भाग 27.6

2) देखें उप-भाग 27.6.1

बोध प्रष्न 5

1) देखें उप-भाग 27.6.2